प्रिय मित्र,

① 'शिक्षामें क्रांति' यह तरुण शांति सेनाका अेक मूलभूत कार्यक्रम है। 'शिक्षामें क्रांति' की आवश्यकता सभी ओर लोग महसूस करते हैं, लेकिन मेडिकल शाखाके विद्यार्थी अुसके प्रति काफी अुदासीन हैं। अिसके मुख्य कारण दो हैं ① मेडिकल शिक्षामें Theory और Practical में ज्यादा अलगाव पैदा नहीं हुआ है। Theory के साथ साथ Practical शिक्षा भी दी जाती है। अिसलिये अन्य शाखाओंकी तरह वह सिर्फ किताबी शिक्षा नहीं है। ② डॉक्टरकी मांग और प्रतिष्ठा समाजमें होनेसे बेकारी, विफलता की तलवार वैद्यकीय विद्यार्थियोंके सरपर टंगी नहीं है। अिसलिये शिक्षामें क्रांतीकी मांग, आवश्यकता अुन्हें appeal नहीं करती।

लेकिन अगर सिर्फ व्यक्तिगत सुरक्षितता को न देखते हुअे अधिक व्यापक सामाजिक दृष्टिकोण से देखें तो ध्यानमें आता है कि हमारे देशकी वैद्यकीय शिक्षामें बहुतसी खामियाँ हैं। आपने खुद अुसे कईबार महसूस किया होगा।

② हमारे अेक डॉक्टर साथी के अनुसार रोगियोंका
अिलाज करते समय वह खुदको असहाय महसूस करता
है - ३ कारणोंसे। ① बीमारियोंके etio-pathogenesis
पर [सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक, और वातावरणीय
कारणोंपर] डॉक्टरका कोई Control नहीं है। अिसलिये
समाज अपनी गलत व्यवस्थाके कारण सतत नये
रोगियोंका निर्माण करते रहता है और डॉक्टर [illegible] जिसे
रोक न सकनेके कारण सिर्फ रोगियोंका अिलाज करते
रहता है, रोगके मूलपर आघात नहीं कर सकता।
② Investigations की सुविधाअें अस्पतालोंके बाहर बहुत
कम प्राप्त होनेसे रोगका ठीक ठीक निदानभी वह
कर नहीं पाता। अिसलिये सिर्फ तात्कालिक, ~~Symptomatic~~
और Symptomatic अिलाजके सिवाय अुसके पास
कोई चारा नहीं बचता। ③ अिलाजकी कीमत
(दवाई, आराम, खाना, नार्सिंग) और रोगीकी आर्थिक
स्थिति, दोनों अुसके Control में न होनेसे
कई बार अिलाज असंभव हो जाता है।

जिन कारणोंसे यह लाजिमी हो जाता है कि डॉक्टर रोग के और रोगीके सामाजिक पहलूपर भी विचार करे। हमारी समाज व्यवस्था के प्रति अपने जिम्मेवार डॉक्टर उदासिन नहीं रह सकता।

③ मेडिकल कॉलेजोंका वातावरण भी ऐसा होता है जिसमें अपनी सामाजिक जिम्मेवारीका भान विद्यार्थीको करानेका कोई प्रयास नहीं होता।

④ डॉक्टरीके काम का दिनबदिन होनेवाला व्यवसायीकरण एक चिंताजनक बात है।

~~आप सब सिर्फ मेडिकल के विद्यार्थी या डॉक्टर ही नहीं है, समाजके प्रश्नोंपर सोचते हैं, समय समयपर कृति करते हैं। जिन विषयोंपर भी आपने कभी सोचा होगा।~~

⑤ हमारी वैद्यकीय शिक्षा भारतकी आर्थिक सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितीसे मेल नहीं खाती। सब विचार, शिक्षा, अभ्यास पाश्चिमकी परिस्थितियोंके संदर्भमें सोचकर होता है।

जिन सब कारणोंसे हमारा डॉक्टर अपनेही

४, आप सिर्फ अेक Medical student या डॉक्टरही नहीं हैं समाजकी सेवाओंमें भी सोचते हैं, समय समयपर कृतीभी करते हैं आपने अिन विषयोंपरभी कभी जरूर सोचा होगा।

देशमें, अपनेही समाजमें अेक contradiction सा है। यहाँ adjust करना, काम करना अुसे मुश्किल हो जाता हैं, खासकर देहातोंमें।

५, साथमें श्री. प्रभाष जोशी का साप्ताहिक सर्वोदय में प्रकाशित अेक लेख हम आपको भेज रहे हैं। अुसमें व्यक्त विचारोंके बारेमें, और अिस पत्र में लिखे मुद्दोंके बारेमें आप और आपके साथी क्या सोचते हैं? हमें लिखियेगा।

मेडिकल शाखामें हमारे जो अन्य साथी हैं अुनके नाम और पतेभी हम आपको साथमें भेजरहे हैं। आप अुनसे संपर्क रखें तो कोई collective thinking और action evolve हो सकती है।

पत्रोत्तरकी अपेक्षामें

आपका

अशोक [illegible]

प्रिय अशोक, अिस covering letter में तुम अपनी ओरसे मुद्दे add कर सकते हो। अंग्रेजी शब्दोंके योग्य प्रतिशब्दभी आप रख सकते हो।

अरुण

गांव वालों की तबीयत के हाल और डॉक्टरों का सवाल

प्रभाष जोशी

इंडियन मेडिकल एसोसिएशन सोलह अप्रैल को सारे देश में 'काला दिन' मनायेगा क्योंकि सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सहायता के लिए देशी उपचार पद्धतियों से इलाज करने वाले लोगों को नियुक्त करना तय किया है। एसोसिएशन का यह फैसला इस बात का बोलता सबूत है कि उसे गांवों में रहने वाले देश के अस्सी प्रतिशत लोगों के स्वास्थ्य की उतनी चिंता नहीं है जितनी कि पश्चिमी उपचार पद्धति और उसके अनुसार इलाज करने वाले डाक्टरों की नौकरियां सुरक्षित करने की है। एसोसिएशन अगर यह भय प्रकट करता कि 'नीमहकीमों' के जिम्मे गांव वालों के स्वास्थ्य को छोड़ना खतरनाक है और स्वास्थ्य सिद्धांतों के आधार पर सरकार की ग्रामीण स्वास्थ्य सहायता योजना का विरोध करता तो बात कुछ समझ में भी आती। लेकिन एसोसिएशन के अध्यक्ष डा० भिड़े के वक्तव्य में इस सामाजिक जिम्मेदारी का आभास तक नहीं है जो कि डाक्टरी के व्यवसाय के साथ अनिवार्य रूप से जुड़ी हुई है। भिड़े साहब ने अपने नाम के आगे लगी डाक्टर की उपाधि पर कोई ध्यान नहीं दिया और इसलिए उनका वक्तव्य ट्रेड यूनियन के अध्यक्ष का वक्तव्य लगता है। उनकी चिन्ता का विषय ग्रामीण स्वास्थ्य नहीं पश्चिमी उपचार पद्धति है जिसे वे आधुनिक वैज्ञानिक पद्धति कहते हैं और इस तरह देशी पद्धतियों को दकियानूस और अवैज्ञानिक बताना चाहते हैं। उनकी दूसरी चिन्ता यह है कि 'नीम-हकीमों' को मान्यता देकर सरकार उन्हें मेडिकल कालेजों में बाकायदा शिक्षा पाए हुए डाक्टरों के समकक्ष रख रही है। डाक्टर भिड़े यह तो स्वीकार करते हैं कि देशी पद्धतियों में बाकायदा शिक्षा पाये हुए लोगों (उन्हें वे डाक्टर कैसे मान सकते हैं?) को अपनी-अपनी पद्धतियों से इलाज करने की छूट दी जाये, लेकिन उन्हें आधुनिक उपचार पद्धति में दखल नहीं देने दिया जाये क्योंकि उसे वे जानते नहीं हैं।

डाक्टर किस लिए ?

इस तरह यह सवाल स्वास्थ्य-रक्षा का नहीं एक उपचार पद्धति और उसमें शिक्षा पाये हुए डाक्टरों के एकाधिकार की रक्षा का है। नैतिक और मानवीय दृष्टि से देखें तो सवाल उठता है कि क्या ये डाक्टर इसीलिए डाक्टरी करते हैं कि उन्हें न केवल पेट भर रोटी मिले बल्कि उनकी डबल रोटियों पर मक्खन की परतें लगातार बढ़ती रहें? उन्हें बंगला, कार, फ्रीज, टेलीविजन और इस तरह की सभी ऐश्वर्य सामग्रियां मिलें, वे शहरों में रहें, हजारों की प्रेक्टिस करें या मोटी तनख्वाहें पायें, विशेषज्ञ बनने के लिए विदेश जायें और फिर वहीं बस जायें? क्या डाक्टरों और साधारण मजदूरों के व्यवसाय में कोई फर्क नहीं है? क्या डाक्टरों पर मानव जीवन की भलाई, रोगियों की सेवा और देश के करोड़ों गरीबों की स्वास्थ्य-सहायता की कोई जिम्मेदारी नहीं है?

श्रीमती इन्दिरा गांधी ने कहा है और देश के आम लोग महसूस करते हैं कि डाक्टरों ने यह जिम्मेदारी नहीं निभाही। जनवरी में चण्डीगढ़ में हुई भारतीय विज्ञान कांग्रेस में प्रधानमंत्री ने कहा कि ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सहायता के मामले में डाक्टरों ने ऐसा कुछ नहीं किया कि जिससे उन पर और स्वास्थ्य सेवा पर खर्च होने वाले कर-दाताओं के करोड़ों रुपयों का कोई लाभ समाज को मिलता। मेडिकल कालेजों और संस्थानों पर हर साल सार्वजनिक धन से करोड़ों रुपया खर्च होता है। एक डाक्टर तैयार करने में हजारों रुपया लगता है। पर यह डाक्टर या तो शहरों में रहकर अच्छी तनख्वाह पाना या कामधेनी प्रेक्टिस करना चाहता है या विदेश जाना चाहता है। गांवों में जाना कोई नहीं चाहता। शहरों में भी सरकार ने जो बड़े-बड़े अस्पताल बनाये हैं उनमें अमीरों और प्रभावशाली लोगों की देखभाल और इलाज होता है। जरूरतमन्द गरीब लोगों को आप इन अस्पतालों में धक्के खाते और धूल फांकते देख सकते हैं। आबादी के कुल १५ से २० प्रतिशत लोग इस स्वास्थ्य सेवा के अन्तर्गत आते हैं और ये सब महा-नगरों और शहरों में रहने वाले लोग हैं। इन लोगों में से भी जिन्हें सचमुच सहायता मिलती है उनका प्रतिशत पांच से ज्यादा नहीं होगा और ये वे लोग हैं जिन्हें राज्य की कल्याणकारी स्वास्थ्य सेवा की जरूरत नहीं हैं। इनके पास पैसा और प्रभाव दोनों हैं।

तो देश के जिन नब्बे प्रतिशत लोगों के खून-पसीने की कमाई से सरकार की स्वास्थ्य सेवा चलती है उन्हें इसका कोई लाभ नहीं मिलता। इससे पश्चिमी पद्धति के डाक्टरों और दवाई उद्योग को लाभ मिलता है और स्वास्थ्य सेवा के ये निहित स्वार्थ आम लोगों के स्वास्थ्य की कोई परवाह नहीं करते।

पश्चिम परस्ती

लेकिन इसका दोष डाक्टरों को ही नहीं दिया जा सकता। जिस तरह हमारे डाक्टर, इन्जीनियर, वैज्ञानिक, आयोजक और प्रशासक पश्चिम की तकनीकी तरक्की से अभिभूत हैं उसी तरह हमारी सरकारें भी विकास के बने-बनाये और सिद्ध तरीकों का आयात करती आयी हैं। सभी क्षेत्रों में उसने पश्चिम के नमूनों की नकल की है और देश की परिस्थितियों, जरूरतों और देश में सुलभ साधनों पर उन्होंने कोई ध्यान नहीं दिया है। इस रवैये के परिणाम और दूसरे क्षेत्रों में तो निराशादायी निकले ही हैं जन स्वास्थ्य

गांव वालों की तबीयत के हाल

→

के मामले में तो वे निश्चित ही और अक्षरशः दुखदायी साबित हुए हैं। योजना के युग की शुरुआत के समय धड़ल्ले से मेडिकल कालेज खोले गये, अनुसंधान संस्थान स्थापित किये और प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों की योजना लागू की गयी। इस स्वास्थ्य सेवा का एक मात्र माध्यम पश्चिमी उपचार पद्धति को स्वीकार किया गया। तब हमारे देश की परिस्थितियां और जरूरतें और साधन ऐसे नहीं थे कि इस महंगी और विदेशी उपचार पद्धति को सहन कर सकें। लोग खाने, पहनने और रहने पर पर्याप्त पैसा खर्च नहीं कर सकते तो उन महंगी दवाइयों और डाक्टरों के लिए कहां से पैसा लाते जिनका सम्बन्ध देश की परिस्थितियों से नहीं है? बड़े से बड़े शहर में अस्पतालों की ऐसी व्यवस्था नहीं हो पाती जो कि स्वीकृत उपचार पद्धति के लिए जरूरी है, गांवों और कस्बों की तो बात छोड़ ही दीजिये जहां डाक्टर रहना तो दूर जाना भी पसन्द नहीं करते।

पद्धति की मजबूरी

यह बात बिलकुल भुला दी गयी कि पश्चिमी उपचार पद्धति एक विकसित तकनीकी व्यवस्था की देन है और एक औद्योगिक ढांचे (इन्फ्रास्ट्रक्चर) के बिना चल नहीं सकती। यह औद्योगिक ढांचा इतने वर्षों के बाद भी इस देश में खड़ा नहीं हुआ है। जो कुछ थोड़ा बहुत हुआ है वह महानगरों में हुआ है और उसका नियन्त्रण अमीरों और राजनीतिक रूप से प्रभावशाली लोगों के हाथों में है। इसलिए आम लोगों और ग्रामीण आबादी का उससे अछूता रहना स्वाभाविक है। पश्चिम की इस नकल का भौतिक नुकसान तो देश को हुआ ही है मानसिक नुकसान और भी ज्यादा हुआ है। पश्चिमी पद्धति में शिक्षा पाने वाला डाक्टर पश्चिम के जीवन मूल्यों से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता क्योंकि शुद्ध वैज्ञानिक पद्धति नाम की कोई चीज दुनिया में नहीं है, शून्य में शुद्ध है। उपयोग में तो वह जीवन पद्धतियों के अनुसार ही काम करता है। इसलिए चाहे डाक्टरी हो, इन्जीनियरिंग हो या विज्ञान का कोई भी क्षेत्र हो पद्धति अपने को उपयोगी सिद्ध करने के लिए अपनी परिस्थितियों की मांग करती है। पश्चिमी उपचार पद्धति न हमारी शहरी परिस्थितियों से मेल खाती है न ग्रामीण परिस्थितियों से। यह इस देश की मिट्टी से नहीं निकली है इसलिए इसका रंग-रूप, स्वभाव और जरूरतें हमारी मिट्टी से अलग हैं। सफाई, खुराक-व्यवस्था और सेवा की जो परिस्थितियां अस्पतालों में जरूरी हैं वे हमारे अच्छे से अच्छे अस्पताल में नहीं हैं। पश्चिम में जिन अस्पतालों को क्षमता और सेवा के उच्चतम स्तर पर पांच-छः व्यक्ति ले जाते हैं उस पर इस देश में पचास डाक्टर और नर्स भी नहीं ले जा पाते। यह सवाल अक्षमता का नहीं परिस्थिति का और उससे उपजी पद्धति का है।

पश्चिम में काशी

पद्धति जनित मानस के कारण हमारे डाक्टर देश की परिस्थितियों, जरूरतों और जीवनमूल्यों से कटे हैं और उनकी काशी पश्चिम में बसी है। आसपास के जीवन से इस कटाव के कारण ही डाक्टरी से सेवा और मानवीय विचार हटे हैं और व्यावसायिकता का बोलबाला हुआ है। डाक्टर पश्चिम जाना चाहते हैं क्योंकि पद्धति उन्हें अपने मूल की ओर खींचती है। वे गांव जाना नहीं चाहते क्योंकि पद्धति ने उन्हें हमारी ग्रामीण परिस्थितियों और जीवनमूल्यों को हिकारत से देखना सिखाया है और देश की वास्तविकताओं से उनकी जड़ें उखाड़ दी हैं। ये डाक्टर अगर सेवा भावना और देशभक्ति से लबालब होते (जैसा कि बहुत से लोग चाहते हैं) तो भी वे ज्यादा कुछ नहीं कर पाते क्योंकि जिस पद्धति से वे डाक्टरी कर सकते हैं वही यहां कारगर नहीं हो सकती। डा० भिड़े अगर ट्रेड यूनियनी भाषा में बोलते हैं तो इसका कारण यह है कि डाक्टरी इस देश में महज एक व्यवसाय होकर रह गयी है और इसीलिए उसमें वर्ग संघर्ष जैसी भावना आयी है।

भारत सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों के लिए देशी उपचार पद्धतियों को और उनके अनुसार इलाज करने वाले उपचारकों को मान्यता और सहायता देने का फैसला करके वास्तविकता को स्वीकार किया है। सरकार की योजना के अन्तर्गत आयुर्वेद, यूनानी, होमियोपैथी और सिद्ध पद्धतियों के अनुसार उपचार कर रहे उपचारकों को दो-तीन माह का प्रशिक्षण दिया जायेगा और वे प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों के अन्तर्गत काम करेंगे। ये ग्रामीण उपचारक आम इलाज करेंगे और विशेष बीमारों को केन्द्र में भेजेंगे। उनका उपचार विशेषज्ञता का नहीं होगा, लेकिन ८० प्रतिशत बीमारों को ऐसे ही उपचार की जरूरत होती है। शहरों के अस्पतालों के और दूसरे डाक्टर भी अधिकांश समय ऐसे ही बीमारों का पेमेन्ट दवाइयों से इलाज करते हैं। विशेष बीमारियों वाले मरीजों की संख्या संसार में सभी जगह कम है और ऐसे मरीजों को उपयुक्त अस्पतालों में भिजवाने की व्यवस्था सरकार कर सकती है।

सभी पद्धतियां

सरकार ने यह फैसला कर के सभी उपचार पद्धतियों को स्वीकार किया है। और परिस्थिति के अनुसार सभी को देश के स्वास्थ्य में योगदान देने का मौका दिया है। इससे पश्चिमी उपचार पद्धति का एकाधिकार समाप्त होगा, लेकिन उससे वह छीना नहीं जायेगा जो वह कर रही है। जहां वह नहीं पहुंच सकती वहीं दूसरी पद्धतियां जा रही हैं। निश्चित ही सरकार एक पद्धति की अनिवार्य कमियों से लोगों को भुगतने के लिए नहीं छोड़ सकती न उन डाक्टरों के लिए नौकरियां सुरक्षित कर सकती हैं जो लोगों के काम नहीं आ सकते।

इससे डॉक्टरों और दवाई उद्योग का नाराज होना स्वभाविक है। अपना एकाधिकार और धंधे के लाभ को कोई नहीं छोड़ना चाहता। डॉक्टर और दवाई उद्योग के लोग देशी पद्धतियों के ग्रामीण उपचारकों को 'नीम हकीम' कहेंगे ही। वे ये भी कहेंगे कि सरकार गांव वालों को घटिया स्वास्थ्य सेवा दे रही है और इस तरह ग्रामीण क्षेत्रों में सरकार के

(बाकी पेज ३८३ पर)

गांव वालों की तबीयत के हाल

(पेज ३७२ से जारी)

प्रति असन्तोष पैदा करने की कोशिश करेंगे। डॉक्टरों की हड़ताल भी हो सकती है। लेकिन सरकार को इससे घबराने की जरूरत नहीं। आम लोगों को इन डॉक्टरों और नकली दवा बनाने वालों से कोई सहानुभूति नहीं है। अस्पतालों में आम लोगों को सन्तोष और सांत्वना कभी मिली नहीं है और डाक्टरों को अधिकांश लोग शोषक मानते हैं। लेकिन सरकार ने अगर अपने फैसले के प्रभावों के अनुसार आगे की योजना नहीं बनाई तो मामला बिगड़ेगा। मेडिकल कॉलेजों में भर्ती और दवाई कारखानों को सहायता कम करनी पड़ेगी। स्वास्थ्य सेवा को देश की कुल जरूरतों के संदर्भ में नये सिरे से जमाना होगा और सुलभ साधनों के अच्छे से अच्छे उपयोग की ग्यारंटी करनी होगी।

भूदान-यज्ञ : सोमवार, १२ मार्च, '७३